BT's International Journal of humanities & social science

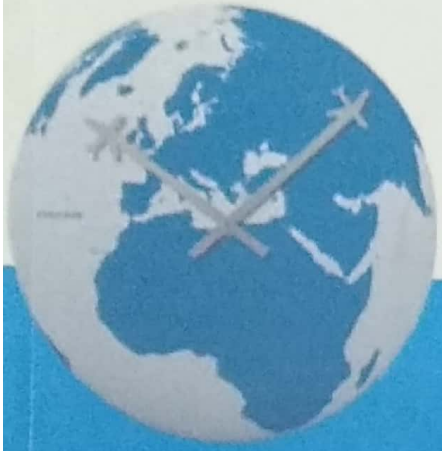

Volume 4 Issue 2 December, 2015

ISSN : 2278 – 1595

Scanned by CamScanner

INDEX

1. Physiology, Sociology and Psychology of Sex and Violence - Dr. Kriti Contractor 1

2. Comparative Study of The Themes In The Novels of Githa Hariharan and Attia Hosain - Dr. Sonia Jain 4

3. Employment Generation Through Mgnrega Among Women Beneficiaries in Jodhpur District, Rajasthan - Dr Lalita Vatta, Gitika kachhwaha 9

4. Indian Feminism - Dr. Sonia Jain 16

5. Tissue and Organ Transplantation: Current Scenerio and Challanges - Priyanka 22

6. Thirties Movement and Mulk Raj Anand - Manmohan Mathur 29

7. What Kind of Freedom Do Women Seek ? - Pooja Rakhecha 34

8. Legal and Ethical Dillemas of Stem Cell Therapy - Priyanka 39

9. शब्दों की यात्रा एवं विकास - डॉ. महीपाल सिंह राठौड़ 47

10. नीतिशास्त्र एवं राजनीति शास्त्र के सहसम्बन्ध विवेचना - डॉ. पूर्णिमा वर्मा 54

11. विदेशों में हिन्दी अध्यापन का कार्य, समस्याएँ एवं समाधान - डॉ. प्रेम सिंह 59

12. लोकगीतों में सौन्दर्य बोध और कलात्मकता - डॉ. मीता शर्मा 62

13. दलित–साहित्य के सन्दर्भ में विविध धारणाएँ - डॉ. राजेन्द्रकृष्ण पारीक 70

Scanned by CamScanner

दलित–साहित्य के सन्दर्भ में विविध धारणाएँ

डॉ. राजेन्द्रकृष्ण पारीक

सहायक आचार्य (हिन्दी–विभाग), महिला पी.जी. महाविद्यालय,
कमला नेहरू नगर, सूरसागर रोड, जोधपुर (राज.)

दलित – साहित्य के सन्दर्भ में विविध धारणाओं पर विचार करने से पूर्व 'दलित' और 'दलित–साहित्य' शब्दों पर विचार करना आवश्यक है।

"दलित" शब्द की कतिपय परिभाषाएँ :–

1. "**दलित का शाब्दिक अर्थ है** – कुचला हुआ। इस दृष्टि से दलित वर्ग का सामाजिक सन्दर्भ में अर्थ होगा – वह जाति–समुदाय जिसका सवर्णों या उच्च जातियों के द्वारा अन्यायपूर्वक दमन किया गया हो, जो इनके द्वारा रौंदी गई हो। 'दलित' शब्द व्यापक रूप में पीड़ित के अर्थ में आता है पर 'दलित वर्ग' हिन्दू–समाज–व्यवस्था के अन्तर्गत परम्परागत रूप में शूद्र माने जाने वाले वर्णों के लिए रूढ़ हो गया है। 'दलित वर्ग' में वे सभी जातियाँ सम्मिलित हैं जो जातिगत सोपान – क्रम में निम्न स्तर पर हैं और जिन्हें सदियों से दबा कर रखा गया है।"

–डॉ. कुसुमलता मेघवाल–

2. "दलित एक संवेदन है, विचार है जिसका अर्थ दबाया गया मनुष्य, जो किसी भी जाति, वर्ण, धर्म, मत, पंथ एवं भौगोलिक क्षेत्र का हो, दलित है।"

– डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी–

गाँधीजी ने इन्हें अछूत समझते हुए अछूतोद्वार–आन्दोलन चलाया और सवर्ण हिन्दुओं में शूद्रों के प्रति दयाभावना जाग्रत करने का प्रयास किया। इस आन्दोलन में एक सीमा तक वे सफल भी रहे। इन्होंने 'शूद्र' के लिए 'हरिजन'' शब्द का उपयोग किया परंतु डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने 'हरिजन' शब्द पर आपत्ति करते हुए कहा कि दक्षिण भारत के मंदिरों में देवदासियों से उत्पन्न सन्तानों को 'हरिजन' कहा जाता है। 'दलित' शब्द का प्रयोग स्वयं डॉ. अम्बेडकर ने किया था जो "डिप्रेस्ड क्लास" का हिन्दी पर्याय है। इस शब्द को समस्त अछूत जातियों ने अपने संघर्ष को तेज करने के लिए अपनाया। निष्कर्षतः 'दलित' शब्द का अर्थ है जिसका दलन या उत्पीड़न किया गया हो। यह उत्पीड़न चाहे शास्त्र के द्वारा किया गया हो अथवा शस्त्र के द्वारा। कुछ लोग दलित का अर्थ अनुसूचित जातियों तक सीमित करते हैं जबकि शाब्दिक दृष्टि से इसमें भारतीय समाज के सवर्ण जातियों के वे लोग भी आते हैं जिनका किसी भी रूप में मानसिक या आर्थिक शोषण किया गया हो।

Scanned by CamScanner

"दलित–साहित्य" के अर्थ को स्पष्ट करती हुई कतिपय विद्वानों द्वारा प्रदत्त परिभाषाएँ :–

1. "दलित–साहित्य दलितों की चेतना को अभिव्यक्ति देता है। इसमें दलित–मानवता का स्वर है, एक नकार है और एक विद्रोह है। यह विद्रोह उस व्यवस्था के प्रति है जो सदियों से दलितों का शोषण कर लाभ की स्थिति में है।"

– डॉ. दयानन्द बटोही–

2. "दलित–साहित्य दलितोत्थान हेतु लिखा गया वह साहित्य है जो भोगे हुए सच पर आधारित है, जो जमीन से जुड़े दलित, शोषित, उपेक्षित, सर्वहारावर्ग से सम्बन्धित है, जो दशा नहीं दिशा को भी इंगित करता है और जिसमें विद्रोह और उद्‌बोधन के साथ संवेदना जाग्रत करने की ऊर्जा है।"

– डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर–

3. "दलित–साहित्य वह साहित्य है जो सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनीतिक क्षेत्रों में पिछड़े हुए उत्पीड़ित, अपमानित और शोषित जनों की पीड़ा को व्यक्त करता है। दलित–साहित्य कठोर अनुभवों पर आधारित साहित्य है। दलित–साहित्य में आक्रोश और विद्रोह की भावना प्रमुख है।"

– माताप्रसाद–

4. "दलित–साहित्य बहुजन समाज के सभी मानवीय अधिकारों और मूल्यों की प्राप्ति के उद्‌देश्यों से लिया गया साहित्य है जो संघर्षों से उपजा है, जिसमें समता और बन्धुता का भाव है और वर्ण–व्यवस्था से उपजे जातिभेद का विरोध है।"

– मोहनदास नैमिशराय –

5. "दलित–साहित्य भाषावाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद को नकारता है तथा पूरे देश को एक सूत्र में पिरोने का कार्य करता है।"

– ओमप्रकाश वाल्मीकि–

इन समस्त परिभाषाओं पर दृष्टिपात करने पर स्पष्ट होता है कि दलित जातियों में उत्पन्न लेखकों द्वारा दलित–जीवन की विसंगतियों पर लिखा गया साहित्य ही दलित–साहित्य है जो दलितों में परम्परागत शोषणपरक मान्यताओं के विरुद्ध विद्रोह की भावना जाग्रत करने का प्रयास करता है जिसमें आक्रोश का भाव है, जो विभेद के प्रति संघर्ष करता है और शोषण से मुक्ति प्राप्त कर समतापूर्ण जीवन जीने का सूत्र सौंपता है, जो जाति–पाँति का विरोधी है और सबको समान मानता है।

दलित–साहित्य के प्रेरणा–स्रोत :–

दलित–साहित्य के प्रेरणा–स्रोत बौद्ध–साहित्य, सिद्ध–साहित्य, नाथ–साहित्य, सन्त–साहित्य, अम्बेडकर की विचारधारा तथा उनका साहित्य और मराठी दलित–साहित्य रहे हैं।

Scanned by CamScanner

गौतम बुद्ध के कतिपय सिद्धान्तों के आधार पर बौद्ध–साहित्य रचा गया। इसमें मानव तथा मानव के बीच जाति, धर्म और वर्ण के आधार पर किसी प्रकार का कोई भेदभाव नहीं बरता गया है, अतः बौद्ध–साहित्य दलित–साहित्य का प्रेरणा–स्रोत बना। अधिकांश सिद्ध और नाथ मूलतः बौद्ध थे। चौरासी सिद्ध–कवियों के गुरु सरहपा तथा नाथ–कवियों के गुरु गोरखनाथ थे। चौरासी सिद्ध–कवियों में 35 शूद्र थे। सरहपा ने ब्राह्मणों का विरोध किया तथा गोरखनाथ ने शूद्रों को पढ़ाने की बात कही। इन्होंने वर्ण–व्यवस्था, जाति–प्रथा तथा ब्राह्मण वर्चस्व का खुला विरोध किया। सरहपा के ब्राह्मण–विरोध का एक उदाहरण प्रस्तुत है –

ब्राह्मण न जानते भेद, यों ही पढ़े ये चारों वेद।
मट्टी, पानी, कुश लेई पठन्त, घर बैठे अग्नि होमन्त।
एक दण्डी त्रिदण्डी भगवा भेसे, ज्ञानी होके हंस उपदेसे।
मित्थे ही जग वह भूले, धर्म–अधर्म जानत तुत्थे।

(दलित–साहित्य के प्रतिमान–पृष्ठ संख्या –83)

हिन्दी–साहित्य के इतिहास की निर्गुण विचाराधारा के संत कवि कबीर तथा रैदास ब्राह्मणवादी व्यवस्था, वर्ण और जाति व्यवस्था के घोर विरोधी रहे हैं। कबीर तथा रैदास दलित–साहित्य के प्रेरणा–स्रोत हैं। रैदास का यह कथन कितना सार्थक दृष्टिगत होता है–

रैदास एक ही नूर ते, जिमि उपज्यो संसार।
ऊँच–नीच किहि विध गए, ब्राह्मण और चमार।

(दलित–साहित्य के प्रतिमान – पृष्ठ संख्या – 85)

दलित–साहित्य को सर्वाधिक प्रभावित डॉ. अम्बेडकर के जीवन और साहित्य ने ही किया है। सदियों से अशिक्षा, अज्ञान एवं दरिद्रता के अन्धेरे में भटकते हुए इस दलित वर्ग के लिए डॉ. भीमराव अम्बेडकर सूर्य के रूप में प्राप्त हुए। इन्होंने समानता, शिक्षा, सम्मान तथा अस्पृश्यता से मुक्ति का प्रकाश प्रदान किया। इन्होंने दलितों के उत्थान हेतु प्रचुर मात्रा में साहित्य भी लिखा।

मराठी साहित्य की मुख्य धारा दलित–साहित्य ही है जिसने हिन्दी में दलित–साहित्य के सृजन को प्रेरित किया है। मराठी में दलित–साहित्य आत्मकथाओं के रूप में प्रकट हुआ है। यहाँ कुछ दलित स्त्रियों ने भी आत्मकथाएँ लिखी हैं। मराठी में मल्लिका अमरशेख, शांता बाई, बेबी ताई कांबले, जना बाई गिरहे, मुक्ता सर्वगौड़, कुमुद पाण्डे तथा शान्ता बाई दाणी ने उल्लेखनीय आत्मकथाएँ लिखी हैं।

दलित साहित्यकार : एक विहंगम–दृष्टि :–

प्रमुख दलित कवि – माताप्रसाद, अछूतानन्द हरिहर, बिहारीलाल 'हरित', बाबूलाल 'सुमन', राजवैद्य माताप्रसाद सागर, राजपालसिंह 'राज', एन.आर. सागर, लक्ष्मीनारायण

Scanned by CamScanner

'सुधाकर', दयानन्द बटोही, सोहनपाल 'सुमनाक्षर', लालचन्द राही, सुखबीरसिंह, प्रेमशंकर, पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी, मंशाराम विद्रोही, मलखानसिंह, मोहनदास नैमिशराय, तेजपालसिंह 'तेज', धर्मवीर, ओमप्रकाश वाल्मीकि, चन्द्रकुमार बरठे, कंवल भारती, सुशीला टाकभौरे, कर्मशील भारती, सूरजपाल चौहान, कुसुम वियोगी, एन.सिंह, सी.बी. भारती, जयप्रकाश कर्दम, श्योराजसिंह 'बेचैन' तथा नवेन्दु महर्षि आदि। इन्होंने प्रबन्धकाव्य, खण्डकाव्य तथा स्फुट कविताएँ लिखी हैं।

प्रमुख दलित कहानीकार : – ओमप्रकाश वाल्मीकि, जयप्रकाश कर्दम, प्रहलादचन्द्र बोस तथा रत्नकुमार सांभरिया आदि।

प्रमुख दलित उपन्यासकार तथा आत्मकथाकार :– जयप्रकाश कर्दम, मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि तथा माताप्रसाद एवं कतिपय मराठी भाषा के आत्मकथाकार।

इनके अलावा दलित आलोचक तथा निबन्ध–लेखक भी हुए हैं जिन्होंने अपनी रचनाओं से दलित–साहित्य को प्रगति–पर्वत पर चढ़ाया है।

दलित–साहित्य में सामाजिक धारणाएँ :–

दलित–साहित्य समता, स्वतंत्रता और बन्धुता का पक्षधर रहा है। दलित–साहित्य किसी भी प्रकार के उत्पीड़न का चाहे वह मानसिक हो, आर्थिक हो, धार्मिक हो या सामाजिक हो, घोर विरोधी है। दलित–साहित्य जातिवादी व्यवस्था का घोर विरोधी है। दलित–साहित्य जातिवाद के उन्मूलन के लिए सदा प्रयत्नशील रहा है। दलित–साहित्य का मूल प्रेरणा–स्रोत डॉ. भीमराव अम्बेडकर की विचारधारा एवं साहित्य है लेकिन गौतम बुद्ध, रैदास और महात्मा फुले भी दलित–साहित्य के सहायक प्रेरणा–स्रोत रहे हैं जिन्होंने हिन्दू–व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह किया है। सन्त रैदास को पहला दलित कवि माना जाता है।

दलित–साहित्य में नारी सम्बन्धी धारणाएँ :–

दलित–लेखकों एवं चिन्तकों का दृष्टिकोण स्त्री के सम्बन्ध में हिन्दू–धर्मशास्त्रों के जैसा ही अमानवीय एवं उत्पीड़न भरा रहा है। इसी कारण वह घर और बाहर दोनों जगह ही उत्पीड़ित रही है किंतु वर्तमान समय में हिन्दी दलित–साहित्य की नारी पुरुष के साथ कन्धे से कन्धा मिला कर चलती है। अब दलित–समाज में नारी को समानता का अधिकार प्राप्त है। वह घर तथा पुरुष दोनों को संभालती है। दलित–समाज में स्त्री की हैसियत अन्य भारतीय हिन्दू–समाज की स्त्रियों से बेहतर है।

दलित–कविताओं में कही–कहीं नारी प्रेयसी के रूप में भी आती है। दलित कवि के लिए नारी साथी है, भोग्या नहीं। वह उसके सम्मान की रक्षा के लिए उसके साथ मिल कर संघर्ष करने को भी तत्पर है। वह नारी के उत्पीड़न और शोषण के विरुद्ध विद्रोह का संदेश देता है और वह स्वयं बगावत करने को तैयार भी है। डॉ. देवेन्द्र दीपक ने अपने काव्य–संग्रह "हम बौने नहीं हैं" की एक प्रलम्ब कविता में आदिवासी स्त्रियों के शोषण पर बड़ी तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की है।

Scanned by CamScanner

दलित–साहित्य में अम्बेडकर की महती धारणा :–

डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने वर्ण और जाति को नकार कर नारी को शिक्षा एवं समानता का अधिकार दिलाया। अम्बेडकर का सपना था कि यह राष्ट्र एक सुदृढ़, समुन्नत और सुखी बनें जिसमें सभी समान हो, सब में परस्पर प्रेम, सहयोग और बन्धुत्व का भाव रहे। समाज में कोई छोटा–बड़ा, ऊँचा–नीचा और अछूत–सछूत न हो। उन्होंने जाति–विहीन और वर्गहीन समाज की स्थापना की परिकल्पना की। अम्बेडकर ने हिन्दू–धर्म में इस विषम जाति–व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष किया। सी.बी. भारती की कविता "जाति" अम्बेडकर के इस विचार को पुष्ट करती हुई दृष्टिगत होती है –

सभी मनुष्य
मनुष्य है वैसे ही
मनुष्य की जातियाँ
हो नहीं सकती कभी
भी हो सकती है।
जातियों की प्रथा जरूर

(दलित–साहित्य के प्रतिमान–पृष्ठ संख्या–238)

इस प्रकार दलित–साहित्य की मूल प्रेरणा अम्बेडकरवादी चिन्तन ही है। डॉ. अम्बेडकर ही ऐसे व्यक्ति हैं जिनके जीवन और विचारों पर हिन्दी दलित–साहित्य में सर्वाधिक लिखा गया है और लिखा जा रहा है।

दलित–साहित्य में धार्मिक धारणा :–

दलित–लेखकों में तीन प्रकार की धार्मिक धारणाएँ देखने को मिलती है –

1. कुछ दलित–लेखक हिन्दू–धर्म में ही रहकर उसमें सुधार के प्रयास करना चाहते हैं।
2. कुछ दलित–लेखक हिन्दू–धर्म को नकार कर बौद्ध–धर्म ग्रहण करना चाहते हैं।
3. कुछ दलित–लेखक, हिन्दू–धर्म को नकार कर बौद्ध–धर्म के अलावा दलित–धर्म की सृष्टि कर दलितों में उसका प्रचार–प्रसार करना चाहते हैं।

कुल मिलाकर दलित–साहित्य का प्रधान स्वर हिन्दू–धर्म के जाल को तोड़ कर उससे बाहर निकलना है। बौद्ध–धर्म को ग्रहण करने के बाद बाबा साहब ने कहा भी था–"आज मैं हिन्दू धर्म के नरक से मुक्त हुआ हूँ।"

दलित–साहित्य में आत्मा–परमात्मा, भाग्य–भाग्यवान्, स्वर्ग–नरक जैसी लगभग सभी हिन्दू–मान्यताओं के विरोध की अभिव्यक्ति हुई है। आत्मा एक ही है तो फिर भंगी और चमार के स्पर्श से परहेज क्यों? इस पर वरिष्ठ दलित कवि ओमप्रकाश वाल्मीकि की यह कविता सटीक टिप्पणी दृष्टिगत होती है –

गंगा किनारे

Scanned by CamScanner

कोई वट–वृक्ष ढूंढ कर
भागवत का पाठ कर लो
आत्मतुष्टि के लिए
कहीं अकाल मृत्यु के बाद
भयभीत आत्मा
भटकते–भटकते
किसी कुत्ते या सुअर की मृत देह में
प्रवेश न कर जाय।

(दलित–साहित्य के प्रतिमान–पृष्ठ संख्या–248)

हिन्दू–धर्म के छद्म को मोहनदास नैमिशराय ईश्वर की मौत करार देते हैं –

ईश्वर की मौत
उस दिन होती है
जब बनता है कोई मंदिर या मठ
वहाँ बैठता है कोई
ठग लुटेरा
गुमराह करने वाला

(दलित–साहित्य के प्रतिमान–पृष्ठ संख्या–258)

दलित–साहित्य की आर्थिक धारणाएँ :–

दलित–समाज धार्मिक और सामाजिक कारणों से विपन्नता का शिकार रहा है। मनुस्मृति में लिखा है कि समर्थ होते हुए भी दलित धन एकत्र नहीं कर सकता और यदि किसी प्रकार वह धन एकत्र कर भी लेता है तो राजा उसका धन छीन लें क्योंकि वह धन का अधिकारी नहीं है। इस बात की पुष्टि डॉ. एन.सिंह ने अपनी एक कविता "सतह से उठते हुए" के द्वारा कर दी है–

अब मैं समझ गया हूँ
उस अंकगणित को
जिसके कारण
मेरे श्रमकण
मिट्टी में मिलकर
तुम्हारी झोली को
मोतियों से भर देते हैं और

Scanned by CamScanner

मेरी झोली में होती हैं
भूख, बेबसी और लाचारी

(दलित–साहित्य के प्रतिमान–पृष्ठ संख्या–259)

हिन्दी दलित–साहित्य निर्धनता के विवरण से भरा पड़ा है। दलित साहित्यकार अपने साहित्य में दलित–समाज की अशिक्षा, अज्ञानता तथा विवशता का चित्रण कर इनसे लड़ने की प्रेरणा देता है।

इस प्रकार दलित–साहित्यकार अपने समाज की आर्थिक विपन्नता और शोषण की स्थिति को पूरी सच्चाई के साथ अभिव्यक्ति देकर साहित्यकार के परम धर्म को पूरी तरह निभाते दृष्टिगत हो रहे हैं।

दलित–साहित्य की राजनीतिक धारणाः–

देश की स्वतंत्रता के बाद अम्बेडकर के प्रयासों से दलितों में कुछ जागृति आई। बम्बई से "मूकनायक" मराठी साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन हुआ जिससे किसी शोषित दलित की कराह जन–जन तक पहुँची, राजनेताओं तक पहुँची। उन्हीं दिनों "महाड़ तालाब" से पानी लेने का आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। इसी अवसर पर एक जनसभा में दलितों द्वारा "मनुस्मृति" ग्रन्थ का दहन किया गया जो हिन्दू–धर्म और समाज–व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह का खुला शंखनाद था। उसके बाद "काला राम मन्दिर–प्रवेश" और "महार वतन" जैसे आन्दोलनों के द्वारा दलित–जागरण को गति दी गई। डॉ. अम्बेडकर ने भारत के संविधान में समानता को मौलिक अधिकार घोषित कर सबको शिक्षा का समान अधिकार और दलित जातियों को संसद् और विधानसभाओं के साथ–साथ सरकारी सेवाओं में भी आरक्षण–व्यवस्था लागू कराई। अम्बेडकर ने इस नारे से "शिक्षित बनो, संगठित हो और संघर्ष करो" दलितों में जागृति लाने का अमोघ प्रयास किया। दलितों के उत्पीड़न को देख कर कवि माताप्रसाद ने अपनी कविताओं के द्वारा दलितों में जोश भरने का प्रयास किया–

दलित बिना नेतृत्व के बिखर गए चहुँ ओर।
धन्य पारखी मित्र वह, मुक्ता गूंथे बटोर।।

(दलित–साहित्य के प्रतिमान–पृष्ठ संख्या–250)

आज सभी राजनीतिक दल इन दलितों, हरिजनों एवं शूद्रों के हितैषी बने हुए हैं भले ही इनमें वोट–बैंक की आकांक्षा रही हो। दलित–साहित्यकारों ने अपने साहित्य के द्वारा राजनीतिक क्षेत्र में एक विलक्षण हलचल पैदा कर दी जिससे राजनीतिक क्षेत्र में दलितों का प्रभाव बढ़ गया है। कुछ साहित्यकारों की कविताओं का विवरण द्रष्टव्य है। जयप्रकाश कर्दम अपनी "मनुष्यता" नामक कविता में सभी विचाराधाराओं, बुद्धिजीवियों और कार्यकर्ताओं से यह आग्रह करते नजर आ रहे हैं–

प्रगतिशील साथियों! आओ
अपने गले में लटके

Scanned by CamScanner

जनेऊ को तोड़कर आओ
अपनी चोटियों में लगी
गाँठे खोलकर आओ
त्रिपुण्ड मिटाकर आओ
समता और न्याय के सिपहसालारों आओ

(दलित–साहित्य के प्रतिमान–पृष्ठ संख्या–130)

कवि नवेन्दु महर्षि के राजनीतिक उद्‌गार देखिए –

दिल्ली चाहती लाना
संविधान की जगह
मनुस्मृति
लोकतन्त्र की जगह
रामराज्य
आजादी की जगह गुलामी
इक्कीसवीं सदी के समय की जगह
दस हजार साल पुराना समय

(दलित–साहित्य के प्रतिमान–पृष्ठ संख्या–134)

नवेन्दु महर्षि के संसद् पर व्यंग्यात्मक विचार द्रष्टव्य है–

यह संसद् मनुवाद की
द्योतक है
इसका चरित्र बदलो
यह वर्ण–भेद की
पोषक

(दलित–साहित्य के प्रतिमान – पृष्ठ संख्या–135)

प्रसिद्ध दलित कवि माताप्रसाद के राजनीति और स्त्री के शोषण पर व्यंग्यात्मक विचार इन काव्य–पंक्तियों में देखिए–

राजनीति दलदल कठिन, हरु पग रखो संभाल।
अगर पैर तिरछा पड़ा, दलदल फंसे कराल।।
राजनीति एक जुआ है, खेलो मित्र! विचार।
जीत होय उसमें कभी, होत हार पर हार।।

Scanned by CamScanner

राजनीति हरि लेत है भूख, नींद अरु प्यास।
सूत टंगी तलवार, यह गिर कब करे विनास।।
राजनीति गहरी नदी, उल्टी बहे बयार।
कछु बीचहि में डूबते, कछु ही उतरे पार।।

(दलित–साहित्य के प्रतिमान–पृष्ठ संख्या–142)

स्त्री के शोषण तथा स्त्री के द्वारा पुरुष की उपेक्षा के उदाहरण भी दलित–साहित्य में यत्र–तत्र मिलते हैं।

कवि माताप्रसाद के राजनीति–विषयक व्यंग्य को भी देखिए –

राजनीति का धर्म जब, बन जाता हथियार।
मरते बहु निर्दोष हैं, रोते कई हजार।
मस्जिद तू ने तोड़ कर, किया बड़ अपराध।
हिन्दू–मुस्लिम लड़ गए, मरे बिना अपराध।।
मस्जिद–रक्षा वचन दे, मुकर गए निज बात।
मर्यादा सब तोड़ दी संविधान कर घात।

(दलित–साहित्य के प्रतिमान–पृष्ठ संख्या–144)

इस प्रकार दलित–साहित्य में अनेक दलित–साहित्यकारों ने राजनीतिक धारणाएँ भी व्यंग्यात्मक रूप में मुखर की है। प्रसन्नता की बात यह है कि वर्तमान युग में दलित–साहित्य की उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है। लगता है निकट भविष्य में दलित–साहित्य हिन्दी–साहित्य की मुख्यधारा से जुड़ जायेगा।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. दलित–साहित्य के प्रतिमान – डॉ. एन. सिंह
2. दलित – चिंतन अनुभव और विचार – डॉ. एन. सिंह

Scanned by CamScanner